श्रीमद्भागवतम्

स्कन्ध 4

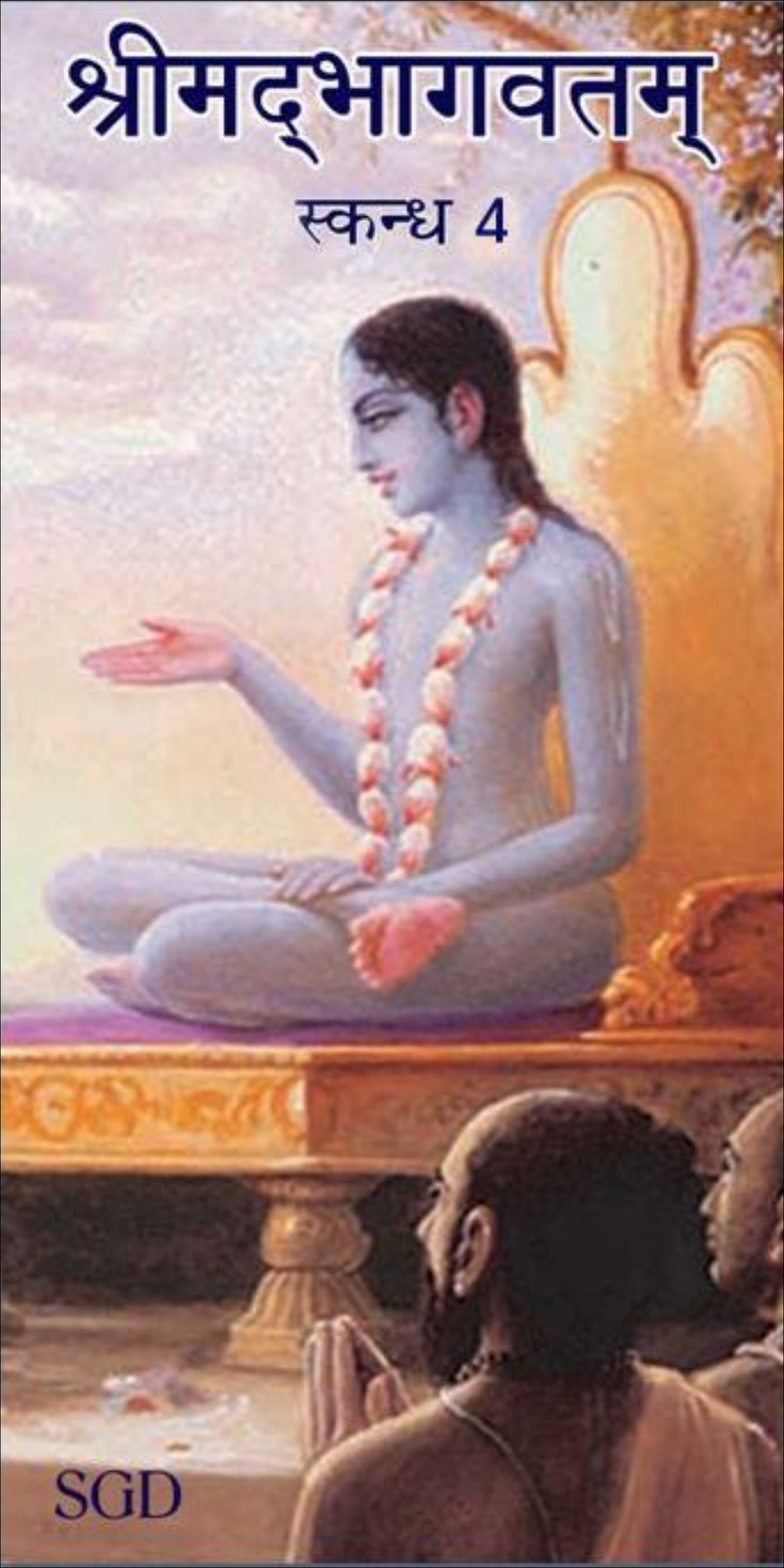

SGD

श्रीमद् भागवत पुराण

अध्याय 13

ध्रुव महाराज के वंशजों का वर्णन

श्रीलगुरुदेव

श्लोक 1: सूत गोस्वामी ने शौनक इत्यादि समस्त ऋषियों से आगे कहा : मैत्रेय ऋषि द्वारा ध्रुव महाराज के विष्णुधाम में आरोहण का वर्णन किये जाने पर विदुर में भक्तिभाव का अत्यधिक संचार हो उठा और उन्होंने मैत्रेय से इस प्रकार पूछा।

श्लोक 2: विदुर ने मैत्रेय से पूछा : हे महान् भक्त, प्रचेतागण कौन थे? वे किस कुल के थे? वे किसके पुत्र थे और उन्होंने कहाँ पर महान् यज्ञ सम्पन्न किये?

श्लोक 3: विदुर ने कहा : मैं जानता हूँ कि नारद मुनि समस्त भक्तों के शिरोमणि हैं। उन्होंने भक्ति की पांचरात्रिक विधि का संकलन किया है और भगवान् से साक्षात् भेंट की है।

श्लोक 4: जब समस्त प्रचेता धार्मिक अनुष्ठान तथा यज्ञकर्म कर रहे थे और इस प्रकार भगवान् को प्रसन्न

करने के लिए पूजा कर रहे थे तो नारद मुनि ने ध्रुव महाराज के दिव्य गुणों का वर्णन किया।

श्लोक 5: हे ब्राह्मण, नारद ने भगवान् का किस प्रकार गुणगान किया और उस सभा में किन लीलाओं का वर्णन हुआ? मैं उन्हें सुनने का इच्छुक हूँ। कृपया विस्तार से भगवान् की उस महिमा का वर्णन कीजिये।

श्लोक 6: महामुनि मैत्रेय ने उत्तर दिया : हे विदुर, जब ध्रुव महाराज वन को चले गये तो उनके पुत्र उत्कल ने

अपने पिता के वैभवपूर्ण राज सिंहासन की कोई कामना नहीं की, क्योंकि वह तो इस लोक के समस्त देशों के शासक के निमित्त था।

श्लोक 7: उत्कल जन्म से ही पूर्णतया सन्तुष्ट था तथा संसार से अनासक्त था। वह समदर्शी था, क्योंकि वह प्रत्येक वस्तु को परमात्मा में और प्रत्येक व्यक्ति के हृदय में परमात्मा को स्थित देखता था।

श्लोक 8-9: उसने परब्रह्म के विषय में अपने ज्ञान के प्रसार द्वारा पहले ही शरीर-बन्धन से मुक्ति प्राप्त

कर ली थी। यह मुक्ति निर्वाण कहलाती है। वह दिव्य आनन्द की स्थिति को प्राप्त था और उसी आनन्दमय स्थिति में रहता रहा, जो अधिकाधिक बढ़ती जा रही थी। यह सतत भक्तियोग के कारण ही सम्भव था जिसकी तुलना अग्नि से की गई है, जो समस्त मलिन भौतिक वस्तुओं को भस्म कर देती है। वह सदैव आत्म-साक्षात्कार की अपनी स्वाभाविक स्थिति में रहता था और भगवान् के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं देख सकता था और वह भक्तियोग में तल्लीन रहता था।

श्लोक 10: अल्पज्ञानी राह चलते लोगों को उत्कल मूर्ख, अन्धा, गूँगा, बहरा तथा पागल सा प्रतीत होता था, किन्तु वह वास्तव में ऐसा था नहीं। वह उस अग्नि के समान बना रहा जो राख से ढकी होने के कारण लपटों से रहित होती है।

श्लोक 11: फलत: मंत्रियों तथा कुल के समस्त गुरुजनों ने समझा कि उत्कल बुद्धिहीन और सचमुच ही पागल है। इस प्रकार उसका छोटा भाई, जिसका नाम वत्सर था और जो भ्रमि का पुत्र था, राजसिंहासन पर

बिठा दिया गया और वह सारे संसार का राजा हो गया।

श्लोक 12: राजा वत्सर की अत्यन्त प्रिय पत्नी स्वर्वीथि थी और उस ने छह पुत्रों को जन्म दिया जिनके नाम थे पुष्पार्ण, तिग्मकेतु, इष, ऊर्ज, वसु तथा जय।

श्लोक 13: पुष्पार्ण के दो पत्नियाँ थीं, जिनके नाम प्रभा तथा दोषा थे। प्रभा के तीन पुत्र हुए जिनके नाम प्रात:, मध्यन्दिनम् तथा सायम् थे।

श्लोक 14: दोषा के तीन पुत्र थे—प्रदोष, निशिथ तथा व्युष्ट। व्युष्ट की पत्नी का नाम पुष्करिणी था, जिसने सर्वतेजा नामक अत्यन्त बलशाली पुत्र को जन्म दिया।

श्लोक 15-16: सर्वतेजा की पत्नी आकूति ने एक पुत्र को जन्म दिया जिसका नाम चाक्षुष था, जो मनु कल्पान्त में छठा मनु बना। चाक्षुष मनु की पत्नी नड्वला ने निम्नलिखित निर्दोष पुत्रों को जन्म दिया—पुरु, कुत्स, त्रित, द्युम्न, सत्यवान्, ऋत,

व्रत, अग्निष्टोम्, अतिरात्र, प्रद्युम्न, शिबि तथा उल्मुक।

श्लोक 17: उल्मुक के बारह पुत्रों में से छह पुत्र उनकी पत्नी पुष्करिणी से उत्पन्न हुए। वे सभी अति उत्तम पुत्र थे। उनके नाम थे अंग, सुमना, ख्याति, क्रतु, अंगिरा तथा गय।

श्लोक 18: अंग की पत्नी सुनीथा से वेन नामक पुत्र उत्पन्न हुआ जो अत्यन्त कुटिल था। साधु स्वभाव का राजा अंग वेन के दुराचरण से अत्यन्त निराश था, फलत: उसने

घर तथा राजपाट छोड़ दिया और जंगल चला गया।

श्लोक 19-20: हे विदुर, जब ऋषिगण शाप देते हैं, तो उनके शब्द वज्र के समान कठोर होते हैं। अत: जब उन्होंने क्रोधवश वेन को शाप दे दिया तो वह मर गया। उसकी मृत्यु के बाद कोई राजा न होने से चोर-उचक्के पनपने लगे, राज्य में अनियमितता फैल गयी और समस्त नागरिकों को भारी कष्ट झेलना पड़ा। यह देखकर ऋषियों ने वेन की दाहिनी भुजा को दण्ड मथनी बना लिया और

उनके मथने के कारण भगवान् विष्णु अपने अंश रूप में संसार के आदि सम्राट राजा पृथु के रूप में अवतरित हुए।

श्लोक 21: विदुर ने मैत्रेय से पूछा : हे ब्राह्मण, राजा अंग तो अत्यन्त भद्र था। वह अत्यन्त चरित्रवान तथा साधु पुरुष था और ब्राह्मण-संस्कृति का प्रेमी था। तो फिर इतने महान् पुरुष के वेन जैसा दुष्ट पुत्र कैसे उत्पन्न हुआ जिससे वह अपने राज्य के प्रति अन्यमनस्क हो उठा और उसे छोड़ दिया?

श्लोक 22: विदुर ने आगे पूछा कि महान् धर्मात्मा ऋषियों ने राजा वेन को, जो स्वयं दण्ड देनेवाले दण्ड को धारण करनेवाला था, क्योंकर शाप देना चाहा और इस प्रकार उसे सबसे बड़ा दण्ड (ब्रह्मशाप) दे डाला?

श्लोक 23: प्रजा का कर्तव्य है कि वह राजा का अपमान न करे, चाहे यदाकदा वह अत्यन्त पापपूर्ण कृत्य करता हुआ ही क्यों न प्रतीत हो। अपने तेज के कारण राजा अन्य शासनकर्ता प्रमुखों से सदैव अधिक प्रभावशाली होता है।

श्लोक 24: विदुर ने मैत्रेय से अनुरोध किया : हे ब्राह्मण, आप भूत तथा भविष्य के समस्त विषयों में पारंगत हैं। अत: मैं आपसे राजा वेन के समस्त कार्यकलापों को सुनना चाहता हूँ। मैं आपका श्रद्धालु भक्त हूँ, अत: आप इसे विस्तार से कहें।

श्लोक 25: श्री मैत्रेय ने उत्तर दिया : हे विदुर, एक बार राजा अंग ने अश्वमेध नामक महान् यज्ञ सम्पन्न करने की योजना बनाई। वहाँ पर उपस्थित समस्त सुयोग्य ब्राह्मण जानते थे कि देवताओं का आवाहन

कैसे किया जाता है, किन्तु उनके प्रयास के बावजूद भी किसी देवता ने न तो भाग लिया और न ही कोई उस यज्ञ में प्रकट हुआ।

श्लोक 26: तब यज्ञ में लगे पुरोहितों ने राजा अंग को सूचित किया : हे राजन्, हम यज्ञ में विधिपूर्वक शुद्ध घी की आहुति दे रहे हैं, किन्तु हमारे सारे यत्नों के बावजूद देवतागण उसे स्वीकार नहीं कर रहे हैं।

श्लोक 27: हे राजन्, हमें ज्ञात है कि आपने अत्यन्त श्रद्धा तथा

सावधानी से यज्ञ की सारी सामग्री एकत्रित की है और वह दूषित नहीं है। हमारे द्वारा उच्चरित वैदिक मंत्रों में भी किसी प्रकार की कमी नहीं है क्योंकि यहां उपस्थित सभी ब्राह्मण तथा पुरोहित योग्य है और समस्त कृत्यों को ठीक से कर भी रहे हैं।

श्लोक 28: हे राजन्, हमें ऐसा कोई कारण नहीं दिखता जिससे देवतागण अपने को किसी प्रकार से अपमानित या उपेक्षित समझ सकें, तो भी यज्ञ के साक्षी देवता अपना

भाग ग्रहण नहीं कर रहे हैं। हमारी समझ में नहीं आता कि ऐसा क्यों है?

श्लोक 29: मैत्रेय ने बतलाया कि पुरोहितों के इस कथन को सुनकर राजा अंग अत्यधिक खिन्न हो उठा। तब उसने पुरोहितों से कुछ कहने की अनुमति माँगी और यज्ञस्थल में उपस्थित समस्त पुरोहितों से उसने पूछा।

श्लोक 30: राजा अंग ने पुरोहित वर्ग को सम्बोधित करते हुए पूछा : हे पुरोहितो, आप कृपा करके बताएँ कि मुझसे कौन सा अपराध हुआ है।

आमंत्रित होने पर भी देवता न तो यज्ञ में सम्मिलित हो रहे हैं और न अपना भाग ग्रहण कर रहे हैं।

श्लोक 31: प्रधान पुरोहित ने कहा : हे राजन्, हमें तो आपके इस जीवन में आप के मन से किया गया भी कोई भी पापकर्म नहीं दिखता, अत: आप तनिक भी अपराधी नहीं हैं। किन्तु हमें दिखता है कि आपने पूर्वजन्म में पापकर्म किये हैं जिनके कारण समस्त गुणों के होते हुए भी आप पुत्रहीन हैं।

श्लोक 32: हे राजन, आपका कल्याण हो। आपके कोई पुत्र नहीं हैं, अत: यदि आप तुरन्त भगवान् से प्रार्थना करें और पुत्र माँगें तथा यदि इस कार्य के लिए यज्ञ करें तो यज्ञभोक्ता भगवान् आपकी कामना को पूर्ण करेंगे।

श्लोक 33: जब समस्त यज्ञों के भोक्ता हरि को पुत्र की कामना पूरी करने के लिए आमंत्रित किया जाएगा, तो सभी देवता उनके साथ आएँगे और अपना-अपना यज्ञ-भाग ग्रहण करेंगे।

श्लोक 34: यज्ञों का कर्ता (कर्मकाण्ड के अन्तर्गत) जिस कामना से भगवान् की पूजा करता है, वह कामना पूरी होती है।

श्लोक 35: इस प्रकार राजा अंग को पुत्र प्राप्ति कराने के लिए उन्होंने घट-घट वासी भगवान् विष्णु को आहुतियाँ अर्पित करने का निश्चय किया।

श्लोक 36: अग्नि में आहुति डालते ही, अग्निकुण्ड से सोने का हार पहने तथा श्वेत वस्त्र धारण किये

एक पुरुष प्रकट हुआ। वह एक स्वर्णपात्र में खीर लिये हुए था।

श्लोक 37: राजा अत्यन्त उदार था। उसने पुरोहितों की अनुमति से उस खीर को अपनी अंजुली में ले लिया और फिर सूँघ कर उसका एक भाग अपनी पत्नी को दे दिया।

श्लोक 38: यद्यपि रानी को कोई पुत्र न था, किन्तु पुत्र उत्पन्न करने की शक्ति वाली उस खीर के खाने से, वह अपने पति के सहवास से गर्भवती हो गई और यथासमय उसने एक पुत्र को जन्म दिया।

श्लोक 39: वह बालक अंशत: अधर्म के वंश में उत्पन्न था। उसका नाना साक्षात् मृत्यु था और वह बालक उसका अनुगामी बना और अत्यन्त अधार्मिक व्यक्ति बन गया।

श्लोक 40: वह दुष्ट बालक धनुष-बाण चढ़ाकर जंगल में जाता और वृथा ही निर्दोष (दीन) हिरनों को मार डालता। ज्योंही वह आता कि सभी लोग चिल्ला उठते, "वह आया क्रूर वेन! वह आया क्रूर वेन!"

श्लोक 41: वह बालक ऐसा क्रूर था कि समवयस्क बालकों के साथ

खेलते हुए उन्हें इतनी निर्दयता के साथ मारता मानो वे बध किये जाने वाले पशु हों।

श्लोक 42: अपने पुत्र वेन का क्रूर तथा निष्ठुर आचरण देख कर, राजा अंग ने उसे सुधारने के लिए तरह-तरह के दण्ड दिये, किन्तु वह उसे सन्मार्ग में न ला सका। वह इस प्रकार से अत्यधिक खिन्न रहने लगा।

श्लोक 43: राजा ने मन में सोचा कि पुत्रहीन व्यक्ति निश्चय ही भाग्यशाली हैं। उन्होंने अवश्य ही पूर्वजन्मों में भगवान् की पूजा की होगी

जिससे उन्हें किसी कुपुत्र द्वारा दिया गया असह्य दुख न उठाना पड़े।

श्लोक 44: पापी पुत्र के कारण मनुष्य का यश मिट्टी में मिल जाता है। उसके अधार्मिक कृत्यों से घर में अधर्म और सबों में झगड़ा फैलता है। इससे केवल अन्तहीन तनाव ही उत्पन्न होता है।

श्लोक 45: ऐसा कौन समझदार और बुद्धिमान है, जो इस तरह का निकम्मा पुत्र चाहेगा? ऐसा पुत्र जीवात्मा के लिए मोह का बन्धनमात्र

होता है और वह मनुष्य के घर को दुखी बनाता है।

श्लोक 46: तब राजा ने सोचा : सुपुत्र की अपेक्षा कुपुत्र ही अच्छा है, क्योंकि सुपुत्र से घर के प्रति आसक्ति उत्पन्न होती है, किन्तु कुपुत्र से नहीं। कुपुत्र घर को नरक बना देता है, जिससे बुद्धिमान मनुष्य सरलता से अपने को अनासक्त कर लेता है।

श्लोक 47: इस प्रकार से सोचते हुए राजा अंग को रात भर नींद नहीं आई। वह गृहस्थ जीवन से पूर्णत: उदास हो गया। अत: एक दिन

अर्धरात्रि में वह अपने बिस्तर से उठा और वेन की माता (अपनी पत्नी) को गहरी निद्रा में सोते हुए छोड़कर चला गया। उसने अपने महान् ऐश्वर्यमय राज्य का मोह त्याग दिया और चुपके से अपना घर तथा ऐश्वर्य छोड़कर जंगल की ओर चला गया।

श्लोक 48: जब यह पता चला कि राजा ने उदास होकर गृहत्याग कर दिया है, तो समस्त नागरिक, पुरोहित, मंत्री, मित्र तथा सामान्यजन अत्यन्त दुखी हुए। वे सर्वत्र उसकी खोज करने लगे जैसे कोई

अनुभवहीन योगी अपने भीतर परमात्मा की खोज करता है।

श्लोक 49: जब सर्वत्र खोज करने पर नागरिकों को राजा का कोई पता न चला तो वे अत्यधिक निराश हुए और नगर को लौट आये, जहाँ पर राजा की अनुपस्थिति के कारण देश के समस्त बड़े-बड़े ऋषि एकत्र हुए थे। अश्रुपूरित नागरिकों ने ऋषियों को नमस्कार किया और विस्तारपूर्वक बताया कि वे कहीं भी राजा को नहीं पा सके।

* * * * * * *

श्रीलगुरुदेव